लेख मील का पत्थर नए प्रकाशन कार्यशालाएं खबरों में

चरखा विकास संवाद
CHARKHA DEVELOPMENT COMMUNICATION NETWORK

तीसरा अंक, द्विमासिक, नवंबर 2004

संपादक की मेज से

''हमारा जीवन उस दिन समाप्त होना ुरु हो जाता है जिस दिन हम उन चीजों के बारे में खामोश हो जाते हैं जो महत्व रखती हैं।''

– मार्टिन लूथर किंग, जूनियर (1929–1968) नागरिक अधिकारों के अमेरिकी नेता.

पिछले दो महीनों में हम भिन्न तरह की अनेकों दिलचस्प गतिविधियों से गुजरे हैं– देहरादून और उत्तरांचल में लेखन कौशलों पर कार्यशाला; रांची, झारखंड में हमारी सामुदायिक रेडियो पहल को मिली अभूतपूर्व प्रतिक्रिया और सफलता; एक वर्ष के अंतराल के बाद लेखन कौशलों पर कार्यशाला के लिए फिर बिहार लौटना और चरखा संजय घोष फैलोशिप का दूसरा वर्ष।

हमारी हर गतिविधि हमारे इस घोषित विश्वास पर आधारित है कि अपने विभिन्न रुपों में संप्रेषण सामाजिक विकास के रास्ते खोल सकता है। इस क्षेत्र में हमारे पास अनेकों तरह के विकल्प हैं -प्रिंट मीडिया, इंटरनेट, सामुदायिक रेडियो, कॉमिक्स, विजुअल कलाओं, टेलीविजन और दीवार अखबारों का दिलचस्प और सटीक मेल। और इनमें से हरेक के प्रति हमेशा की तरह ही उत्साहजनक प्रतिक्रिया रही है।

सामाजिक विकास और संपेषण के बीच एक सहजीविता का संबंध है। भारत में इस संबंध की संभावनाओं को लगभग नहीं ही तलाशा गया है। विडंबना की बात है कि आजादी के 57 वर्ष गुजर जाने के बावजूद, ग्रामीण भारत की अधिकांश आबादी गरीबी, कर्ज, ोषण, सीमांतीकरण तथा सामाजिक भेदभाव की अभिशप्त बेड़ियों में जकड़ी है। इन लोगों की आवाजें या तो दबी हुई हैं या फिर इतनी कमजोर हैं कि सत्ता और प्रभाव के गलियारों तक पहुंच ही नहीं पातीं।

इसी मान्यता के कारण चरखा ने अपनी विभिन्न पहलों में स्थानीय समुदायों और नीति निर्माताओं के बीच की खाई पर पुल बनाने का काम किया है। रांची, झारखंड के अंगदा ब्लॉक में हमारी पहली सामुदायिक रेडियो पहल का उद्घाटन हुआ और आकाशवाणी रांची से *''पेछूवाली मन केर स्वर''* (हाशिए के लोगों की आवाजें) का पहला प्रसारण हुआ। यह कार्यक्रम चरखा की उपरोक्त मान्यता ही का परिणाम है। स्थानीय समुदाय की प्रतिक्रियाओं ने हमें सच में अभिभूत कर दिया और इसने प्रभावी संप्रेषण माध्यम की जरुरत के हमारे विश्वास को एक बार फिर से पुष्ट किया।

हमारे संस्थापक ने सामाजिक परिवर्तन के एक उपकरण के रुप में विकास संवाद-संप्रेषण की मशाल जलाई थी और हम इस बात के लिए कृत-संकल्प हैं कि वह उसी तरह रोशनी देती जलती रहे।

इन्द्राणी डे

अपील

देश के दक्षिणी राज्यों में समुद्र की सूमानी लहरों से हुए भयानक तबाही और जानमाल के नुकसान पर हम गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं। आपदा की इस घड़ी में पीड़ित व्यक्तियों की मदद के लिए आप भी हाथ बढ़ा सकते हैं।

राहत सामाग्री या अन्य मदद के लिए निम्न संस्थाओं से संपर्क किया जा सकता है।

सूनामी साउथ-इंडिया एनजीओ कॉरिर्डेनेशन सेल नं ४, सथालवार स्ट्रीट, मुगापैयर वेस्ट चेन्नई, 600037 फोन- 9144-26244211, 9144-26357854 फैक्स- 9144- 26250315 संयोजक- डॉ जैकब धर्मराज फोन-91- 9840221710, 91-9380126090 prepare@vsnl.com	**अंशु के गुप्ता** निदेशक, गुंज जे-93, सरिता विहार नई दिल्ली-44 फोन-011-26972351, मो- 9868146978 www.goonj.info
एनजीओ सेल एडमिनिस्ट्रेशन आर मोहन फोन- 91-9380125945 राष्ट्रीय/ दिल्ली सहयोग गुरिंदर कौर, ऑक्सफेम इंडिया ट्रस्ट फोन-91-981162627 oxfamindia@vsnl.net gurindar.kaur@oxfamint.org.in	**सुब्बू** तमिल मनीला कट्टिडा थोजिलालरर संघम 1, क्रॉस एसटी (एफएफ) कलपॉक गार्डेन चेन्नई-600010 फोन-044-26478386 msubbu_cwbc@vsnl.net
हेल्प सेंटर इन श्री लंका फोन- (हेल्पलइन) 94785107107 कृष्णा- 94722244690 विन्या-94777899196 सर्वोदय मुख्य कार्यालय फोन- 94112655255, 94112655125 फैक्स-94112656512 ssmpian@sri.lanka.net,Krishna@itmin.net nirvana@sltnet.lk, arisar@sitnet.lk डॉ ए टी अरियारत्ने सर्वोदय मूवमेंट, सर्वोदय मुख्य कार्यालय 98, रावाटावाटा रोड, मोरातुआ , श्रीलंका	**टी पेटेर** नेशनल फिशवर्कर फोरम वेलानकन्नी जंक्शन, वलियाथुरा पो-वल्लाकदाउ, त्रिवेंद्रम-695008 फोन-0471-2501376, 2505216 nff@vsnl.com

तीन दिवसीय कार्यशाला

उत्तरांचल राज्य के गठन के चार साल के सफर का मूल्यांकन करने के लिए देहरादून में मध्य हिमालय अध्ययन केंद्र के सहयोग से 25 अक्तूबर से 27 अक्तूबर तक कार्यशाला का अयोजन किया गया। इसमें प्रदेश भर से आए सामाजिक कार्यकर्ताओं, संसदीय कार्य और सूचना मंत्री इंदिरा हृदयेश, वरिष्ठ पत्रकार हेमलता जोशी, शेखर पाठक, प्रसून लतांत, संजय श्रीवास्तव, दिनेश जोशी और चरखा के अमन नम्र और इंद्राणी डे ने हिस्सा लिया।

कार्यशाला में राज्य के गठन के चार सालों मं आंतरिक स्वरूप में हुए बदलाव और राजनीतिक प्रभाव के बाबत किए गए सर्वेक्षण पर आधारित रिर्पोट भी जारी की गई। सभी प्रतिभागियों ने अपने सर्वेक्षण के आधार पर कहा कि आम जनता ने इन चार सालों में ऐसा कुछ भी हासिल नहीं किया है जिसे सार्थक और संतोषजनक कहा जाए। सर्वेक्षण के हवाले से बताया गया कि प्रशासन की कार्यप्रणाली को दस फीसद लोगों ने अच्छा, चौंतीस फीसद लोगों ने खराब और बाकी ने महज संतोषजनक करार दिया।

सामुदायिक रेडियो की शुरूआत

चरखा ने झारखंड के रांची में पिछले महीने से सामुदायिक रेडियो की शुरूआत की है जो जनभागीदारी ओर संचार के विकेंद्रीकरण का एक माध्यम है। सामुदायिक रेडियो का मकसद जन वकालत करना है जिससे हाशिए पर खडे लोगों की आवाज मुख्यधारा मीडिया तक पहुंच सके। इस रेडियो से जो भी कार्यक्रम प्रसारित होगा वह गांव के लोग मिलकर तैयार करेंगे। सामुदायिक रेडियो के माध्यम से विभिन्न सरकारी योजनाओं, पंचायती राज और ग्रामीण विकास जैसे मुद्‌दों पर कार्यक्रम प्रसारित किए जाएंगे ताकि गांव के लोगों का विकास हो और उन्हें उनके अधिकारों के प्रति जागरूक बनाया जा सके।

झारखंड में चरखा के क्षेत्रीय सहयोगी मंथन युवा संस्थान के साथ बीते 31 अक्तूबर को 'पेछुवाइल मन केर स्वर के' अपने पहले एपिसोड का शुभारंभ अंगड़ा ब्लॉक के मुंगाढ़ीह गांव में हुआ। यह कार्यक्रम हर रविवार शाम साढ़े छह बजे विविध भारती रांची से प्रसारित होगा। इस मौके पर बोलते हुए चरखा के अध्यक्ष शंकर घोष ने कहा कि सामुदायिक रेडियो का स्वरूप लोकतांतित्रक है जिसमें हर व्यक्ति को बोलने, सुनने और कार्यक्रम बनाने की पूरी छूट है। यह रेडियो संचार का एक ऐसा माध्यम है जिसमें निरक्षर भी अपनी भागीदारी निभा सकते हैं। मंथन युवा संस्थान के संचालक सुधीर पाल ने कहा कि यह रेडियो हाशिए पर खड़े लोगों को अपनी आवाज उठाने का मंच तो मुहैया कराएगा, साथ ही समुदाय की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में उनकी मदद करेगा।

महिला लेखन प्रशिक्षण कार्यशाला

5-6 नवंबर तक बिहार के जमुई जिले के श्रमभारती खादीग्राम में ब्रिटीश हाईकमीशन के वित्तिय सहयोग से चरखा ने सामाजिक बदलाव में महिलाओं के भागीदारी का दस्तावेजीकरण पर कार्यशाला का आयोजन किया। चरखा का यह प्रयास था कि महिलाएं निजी और सामाजिक जीवन और विकास के संदर्भ में लेखन की जरूरत को समझें और वैचारिक और तकनीकी पक्षों की जानकारी बढ़ाए साथ ही अपने आस-पास की गतिविधियों के प्रति संवेदनशीन बने। इस कार्यशाला में राज्य के आठ जिलों की 25 महिलाएं शामिल हुई जो किसी न किसी संगठन से जुड़ी हुई हैं। स्रोत व्यक्ति के तौर पर जनसत्ता अखबार की नीलम गुप्ता, स्वतंत्र पत्रकार अलका आर्य, गांधीवादी आचार्य राममूर्ति और चरखा से अमन नम्र और प्रतिभा ज्योति ने हिस्सा लिया।

चरखा संवाद

'चरखा संवाद' जो हिंदी में प्रकाशित होने वाली हमारी पत्रिका है उसके दूसरे अंक में हमने नीति दीवान, इशफाक-उल-हसन, अनुजा शुक्ल, ऊषा चौधरी, प्रतिभा ज्योति और समीर बनर्जी के लेख प्रकाशित किए हैं। साथ ही चरखा की सभी कार्यशालाओं का संक्षिप्त ब्यौरा, सामुदायिक रेडियो पर इरशाद अहमद का एक लेख, संपादक के नाम पत्र, राज्यों से आए पत्र, मेहमानों के लिए कॉलम और विशेष रूप से एक फोटो फीचर शामिल किया है। यदि आप चरखा संवाद का यह अंक चाहते हों तो अपने पूरे पते के साथ हमें लिखें।

चरखा-संजय घोष शांति और विकास फेलोशिप 2004-2005

चरखा ने कश्मीर घाटी, जम्मू और लद्दाख में लोकतांत्रिक मूल्यों की हिफाजत करने और शांति प्रयासों के लिए दुस्साहसी पत्रकारिता करने वाले तीन युवा पत्रकारों को सात दिसंबर को पचास हजार रूपए का फेलोशिप दिया। लद्दाख की एकमात्र पत्रिका 'लदाग्स मेलोंग' के प्रबंध संपादक त्सेवांग रिगजिन, श्रीनगर में 'पायोनियर' अखबार में संवाददाता और उर्दू दैनिक 'निदाई मशरिक' में बतौर सलाहकार संपादक के रूप में काम करने वाले खुर्शीद वानी और जम्मू-कश्मीर में 'इंडियन एक्सप्रेस' के वरिष्ठ संवाददाता प्रदीप दत्ता को इंडियन एक्सप्रेस के मुख्य और प्रधान संपादक शेखर गुप्ता ने नई दिल्ली में हुए एक समारोह में प्रदान किया।

फेलोशिप के तहत त्सेवांग रिगजिन लद्दाख में सेना की मौजूदगी के सकारात्मक और नकारात्मक पहलूओं का अध्ययन करेंगे। साथ ही विकास प्रक्रिया पर इसके प्रभाव का भी आकलन करेंगे। अंग्रेजी में लिखे गए उनके लेखों में सेना में संभावित कटौती और लद्दाख के लोगों का नजरिया पेश किया जाएगा।

अंग्रेजी और उर्दू दोनों भाषाओं पर अपनी पकड़ रखने वाले खुर्शीद वानी धार्मिक अल्पसंख्यकों खासकर कश्मीरी पंडित, सिख और गुज्जर/बकरवाल आदिवासियों की समस्याओं को उजागर करेंगे। वहीं प्रदीप दत्ता कश्मीर की नदी राजनीति का अध्ययन करेंगे। वे चिनाब, झेलम और सिंधु नदियों में राज्य के अंदर और पड़ोसी देश के साथ राजनीतिक संबंधों पर लिखेंगे।

Our Jury member, Mr. Mohammad Sayeed Malik, shares with us his experience of the Charkha-Sanjoy Ghose Fellowship...

मेरा निजी अनुभव है कि द्वंद्वग्रस्त इलाकों में व्याप्त असुरक्षा की मनहूसियत और जीवन की गरिमाहीनता को कभी ठीक से बयान नहीं किया जा सकता। इसका अक्षम कर देने वाला प्रभाव समाज की सबसे कीमती संपदा को ही नष्ट कर डालता है, और वह संपदा है -मानवीय संसाधन। निराशा और निरुपायता का अहसास इस कदर घातक होता है कि असह्य हो जाए। यह मानवीय उद्यमशीलता की भावना की ही हत्या कर डालता है। इससे बाहर आने का रास्ता अक्सर ही नहीं मिलता। और जब रास्ता मिल जाता है तो वह हमारे लिए उम्मीद की भूली हुई खिड़की को एकाएक खोल देता है। अचानक विचारों के अंकुर फूटने लगते हैं।

'चरखा' ने जब पिछले साल 'संजय घोष अध्येतावृत्ति' का निर्णय करने के लिए मुझे निर्णायक मंडल में ृाामिल किया, उससे पहले मेरे दिमाग पर यह सोच हावी थी कि कश्मीर में मानवीय संसाधनों की संपदा की जो क्षति हुई है, उसकी पूर्ति निकट भविष्य में नहीं की जा सकती। जीवन और मौत के अभिशप्त खेल ने दिमाग में जिस भयाक्रांति को जन्म दिया था, उसने कोई ऐसा 'स्पेस' ही नहीं छोड़ा था जहां रचनात्मक विचारों को पाला-पोसा जा सके। जब अध्येतावृत्ति देने के लिए उम्मीदवारों का चुनाव करने की खातिर निर्णायक मंडल एकत्रित हुआ, तब मैंने पाया कि एक चीज थी जिसे मैं तब तक देख नहीं पाई थी: यहां ऐन कश्मीर में बैठे हुए मैं अपने युवकों और युवतियों के भीतर मौजूद उस ललक को न देख सकी थी और न ही समझ सकी थी जो उस सब का पुनर्निर्माण करना चाहती थी जिसे द्वंद्व ने नष्ट कर दिया था। कश्मीर के सामाजिक पुर्ननिर्माण के तौर-तरीकों पर अशांति में घिरे प्रतियोगी उम्मीदवारों के विचारों की विविधता और गहराई मेरे दिमाग से रोशनी की एक चमकीली कौंध की तरह टकराई। असल जिंदगी के मुद्दों के बारे में उनके पास कहने को इतनी उपयोगी बातें थीं कि उनसे एक तरह से मैं शिक्षित हुई। उनमें कितना साहस है कि वे अपनी पीड़ा को पीछे छोड़ अपने भविष्य की ओर देख सके!

ृाांति, विकास और समरसता को बढ़ावा देने का उद्देश्य रखने वाली यह अध्येतावृत्ति निस्संदेह बेहद बड़ी मानवीय समस्या से निपटने की एक विनम्र कोशिश है। अगर हम द्वंद्वग्रस्त क्षेत्र के नजरिए से देखें, तो इनमें से हर चीज - ृाांति, विकास और समरसता -जीवन और मृत्यु, सम्मान व अपमान, आशा और निराशा के बीच बहुत बड़ा अंतर पैदा कर सकती है। अध्येतावृत्ति का यह प्रयास स्थानीय मानवीय संसाधनों को पुनर्जीवित, प्रोत्साहित और अक्षय बनाए रखने पर आधारित है। यह तथ्य इस अध्येतावृत्ति को विश्वास निर्माण की दिशा में एक मूल्यवान कदम बना देता है। इस प्रारंभिक चरण तक में इसके उत्प्रेरक प्रभाव की दूरगामिता की कल्पना करना मुश्किल नहीं है।

बंदूक की संस्कृति के द्वारा पैदा की गई निष्क्रिय कर डालने वाली मानसिक भयाक्रांति से मुक्ति पाने के लिए असल में विचारों की जंग को मजबूत बनाने की जरुरत है। ऐसे विचारों को जो गांवों और ृाहरों में साधारण लोगों की जिंदगियों को छूते हों। पिछले डेढ़ दशक से कश्मीर में चली आ रही अशांति की त्रासद मानवीय कीमत ने सामाजिक विजन को विकृत कर दिया है। 'धरती पर के स्वर्ग' में फिर से ृाांति, विकास और समरसता हासिल करने का असल मंत्र है, इस विजन को इसके मूल मानवीय रुप में पुर्नस्थापित करना।

समाजिक बदलाव के लिए कॉमिक्स

चरखा सामाजिक कार्यकर्ताओं, पंचायतकर्मियो और महिलाओं को कॉमिक्स और कार्टून बनाने का भी प्रशिक्षण देता है ताकि वे प्रभावशाली और आसान तरीके से मीडिया तक अपनी बात पहुंचा सके। कॉमिक/कार्टून के जरिए चरखा के प्रतिभागी सामाजिक बदलाव में अहम भूमिका निभा रहे हैं।

'पेछुवाइल मन केर स्वर'

चरखा अब तक मुख्यधारा के प्रिंट मीडिया में देश की दूर-दराज की समस्याओं और विशेषताओं को लेख और फीचर के रूप में स्थान दिलाने की कोशिश करता आया है। इसने अपना अगला कदम सामुदायिक रेडियो की तरफ बढ़ाया है जो जनभागीदारी ओर संचार के विकेंद्रीकरण का एक माध्यम है। सामुदायिक रेडियो का मकसद जन वकालत करना है जिससे हाशिए पर खडे लोगों की आवाज मुख्यधारा मीडिया तक पहुंच सके। इस रेडियो से जो भी कार्यक्रम प्रसारित होगा वह गांव के लोग मिलकर तैयार करेंगे। ग्रामीणों को प्रशिक्षण देने का काम चरखा की ओर से किया जा रहा है। चरखाने अगस्त के आखरी सप्ताह में रांची में अपने क्षेत्रीय सहयोगी मंथन युवा संस्थान के साथ ग्रामीणों के लिए पांच दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया था। सामुदायिक रेडियो के माध्यम से विभिन्न सरकारी योजनाओं, पंचायती राज और ग्रामीण विकास जैसे मुद्दों पर कार्यक्रम प्रसारित किए जाएंगे ताकि गांव के लोगों का विकास हो और उन्हें उनके अधिकारों के प्रति जागरूक बनाया जा सके।

बीते 31 अक्तूबर को इस सामुदायिक रेडियो के पहले 'पेछुवाइल मन`केर स्वर के' अपने पहले एपिसोड का शुभारंभ किया। यह कार्यक्रम हर रविवार शाम साढ़े छह बजे विविध भारती रांची से प्रसारित होगा। रांची के अनगड़ा ब्लॉक के मुंगाढ़ीह गांव में हुए उद्घाटन समारोह में चरखा के अध्यक्ष शंकर घोष ने कहा कि सामुदायिक रेडियो स्वरूप लोकतांत्रिक है जिसमें हर व्यक्ति को बोलने, सुनने और कार्यक्रम बनाने की पूरी छूट है। यह रेडियो संचार का एक ऐसा माध्यम है जिसमें निरक्षर भी अपनी भागीदारी निभा सकते हैं। मंथन युवा संस्थान के संचालक सुधीर पाल ने कहा कि यह रेडियो हाशिए पर खड़े लोगों को अपनी आवाज उठाने का मंच तो मुहैया कराएगा, साथ ही समुदाय की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में उनकी मदद करेगा।

लेख

पहली बार में पिटा बीटी कॉटन

पंकज चतुर्वेदी

उन्होंने तो सपने बोए थे, लेकिन फसल के रूप में उनके हाथ धोखा, निराशा और हताशा ही लगी। सरकारी अफसर तक उनके पीछे लगे थे कि यह नया अमेरिकी बीज है, ऐसी फसल मिलेगी कि रखने को जगह नहीं मिलेगी। लेकिन हुआ ठीक उसका उल्टा। खेत में उत्पादन लागत अधिक लगी और फसल इतनी घटिया कि सामान्य से भी कम दाम पर खरीदार नहीं मिल रहे हैं। भारत में पहली बार बोए गए बायोटेक बीज बीटी काटन की पहली फसल से ही थोथे दावों का खुलासा हो गया। अब बीज बेचने वाली कंपनी अपनी कलई खुलने के डर से किसानों के ही दोष गिनवा रही हैं।

बेहतरीन फसल और उच्च गुणवत्ता के कपास के सपने दिखाने वाले बीटी कॉटन बीज पर्यावरणविदों के भारी विरोध के बावजूद कर्नाटक, आंध्रप्रदेश और मध्यप्रदेश में बोए गए। पिछले साल कंपनी ने इस कपास के बीज को बेचने के लिए सरकार से मान्यता लेकर बाजार में उतारा। इस कपास की उत्पादन क्षमता के बारे में कंपनी ने जो दिवास्वपन दिखाए उसको हकीकत मानकर किसानों ने इसे अपनाया लेकिन पहली फसल ने ही दगा दे दिया। कंपनी के खोखले वादों के चलते पिछले साल यह बीज फेल रहा। बावजूद इसके चालू वर्ष में बोलगार्ड कपास की तीन जातियां बाजार में उतार दी गयी।

आंध्रप्रदेश में कंपनी की इस जालसाली से वहां के किसान बहुत हताश हुए। वहां तो यह मामला अब राजनीतिक रंग ले चुका है। राज्य के कृषि मंत्री को विधानसभा में स्वीकार करना पड़ा कि बीटी कॉटन बीज अपनी कसौटी पर खरे नहीं उतरे। इस बीज से पैदा हुए कपास के फूल का आकार छोटा है और उसकी पौनी भी ठीक से नहीं बनती है। इसी कारण नए बीज उत्पाद बाजार में 200 से 300 रूपए प्रति क्विंटल कम कीमत पर बिका।

आचार्य एनजी रंगा कृषि विश्वविद्यालय के कुछ वैज्ञानिकों ने आंध्रप्रदेश के उन खेतों का सर्वे किया जहां बीटी कपास बोया गया था। उन्होंने पाया कि संकर बीज की फसल जहां 10 से 15 क्विंटल प्रति एकड़ होती है वहीं बीटी कपास की पैदावार दो से आठ क्विंटल ही रही। ग्रीन पीस इंडिया नामक गैरसरकारी संगठन ने कर्नाटक के तीन जिलों रायचूर, धारवाड़ और हवेरी में बीटी कपास वाले खेतों की जांच की। यहां 77 फीसदी किसानों ने फसल में इल्ली लगने से शिकायत की। गौरतलब है कि बीटी कपास बीज के बारे में दावा किया गया था कि इस फसल में कीट लगते नहीं लिहाजा कीटनाशक का खर्च हटाने के बाद प्रति एकड़ 700 से 1000 रूपए की बचत होगी। लेकिन दावे के उलट बीटी कपास वाले खेतों में कुछ अधिक ही दवा छिड़कनी पड़ी। यही नहीं इस बीच में खाद भी अधिक लगा जिसका खर्चा प्रति एकड़ 600 से 1000 रूपए प्रति एकड़ अधिक बैठा। फिर फूल छोटा होने से रूई निकालने में मजदूरी भी ज्यादा देना पड़ा।

देश में कपास उत्पादन में आंध्रप्रदेश का दूसरा स्थान है। यहां कोई 10 लाख हेक्टेयर में कपास बोया जाता है। यहां सरकार की पहल पर वारंगल, कुरनूल, मेहबूब नगर और आदिलाबाद में करीब सात हजार किसानों ने बीटी कपास बोया था और उसमें कीड़ा लगने से हुए घाटे के चलते आत्महत्या कर ली मामला जब विधानसभा में उठा तो कृषि मंत्री ने वादा किया कि वे बीज सप्लाई करने वाली कंपनी महायिको मांसेटो बायोटेक (इंडिया) लिमिटेड यानि एमएमबी से बीज के दाम घटाने के लिए कहेंगे। लेकिन विपक्ष की मांग थी कि किसानों को हुए नुकसान का हर्जाना एमएमबी भरे। मंत्री ने एक लिखित करार का वास्ता दे कर बताया कि मुआवजे का दावा संभव नहीं है।

अब एमएमबी के अधिकारी इस बात से इंकार कर रहे हैं कि उन्होंने कभी अधिक पैदावार या बड़े फूल का वादा किया था। उनका कहना है कि संकर बीजों की बीटी कपास किस्म में महज एक ऐसा आनुवांशिकी बदलाव किया जाता है, जिससे उसके उत्पादों पर इल्ली-कीट का प्रकोप नहीं होता है। कंपनी ने किसानों की फसल प्रबंधन क्षमता को दोषी बता कर कम कपास होने का ठीकरा किसानों के सिर ही फोड़ा।

लेकिन डेक्कन सोसायटी और वारंगल कोलीशन अगेंस्ट जेनेटिक इंजीनियरिंग वारंगल जिले में कपास के खेतों पर एक अध्ययन करने के बाद कंपनी के इन दलीलों को नहीं मानता। सोसायटी से जुड़ी सुश्री एस किरन ने पाया कि फसल के नुकसान के लिए किसानों की पारंपरिक प्रबंधन क्षमता को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। वे प्रमाण देती है कि कई किसानों ने बीटी कपास के साथ-साथ अन्य दूसरी संकर किस्में भी बोई हैं। उनके दूसरे बीजों की पैदावार बढ़िया रही। जाहिर है कि कमी तो नए बीजों में ही रही है।

अमूमन यही हाल मध्यप्रदेश का रहा। राज्य के कई हिस्सों में बीटी कॉटन की तीन जातियां बेची गई। इन प्रजातियों के 2500 पैकेट झाबुआ जिले में बेचे गए जिनमें से 1800 पैकेट पेटलावाद तहसील में बेचे गए। हर पैकेट का दाम 1400 से 1650 रूपए तक दाम वसूला गया। इन क्षेत्रों के आदिवासी किसानों ने कंपनी के खोखले वादों के चक्कर में फंसकर अपने गहने गिरवी रख और कर्ज लेकर इस कपास के बीज को खरीदा था। कंपनी ने 65 फीसदी बीज उगने का वादा किया था लेकिन 25 से 30 फीसदी बीज ही उग पाया। ऐसी स्थिति में किसानों के खेत खाली हो गए। लगातार तीन साल के सूखे की मार से पीड़ित किसान बहुत दुखी हो गए हैं और मदद के लिए इधर-उधर भटक रहे हैं। किसानो ने स्थानीय प्रशासन से सहायता की अपेक्षा की लेकिन स्थानीय प्रशासन ने भी उन किसानों से मुंह मोड़ लिया है। इस परिस्थिति में क्षेत्र के किसानों को बड़ी आर्थिक हानि का सामना तो करना पड़ा ही साथ ही साथ वे मानसिक रूप से प्रताड़ित भी हुए है।

वैसे अब किसानों को बीटी कपास की ध ोखाधड़ी समझ आ गई है। अगली फसल के लिए किसानों ने एक बार फिर अपने पारंपरिक ज्ञान और प्रक्रिया को ही अपनाने का फैसला किया है। किसानों पर दबाव बनाने के लिए कंपनी अब सरकारी नियमों और कर्ज का सहारा ले रही है। लेकिन इतना तय है कि अगर सरकार ने बहुराष्ट्रीय कंपनियों ओर बीज विक्रेताओं के इन गोरखधंधो को नहीं रोका तो एक दिन ऐसा आएगा कि छोटे किसानों को अपनी रोजी-रोटी के साधन खेती से हाथ धोना पड़ेगा, क्योंकि बीटी कपास से खेत की दूसरी फसलों के भी जहरीले होने का खतरा पैदा होता है। (चरखा)

पारो की कब्र नहीं होती

डॉ वीरेंद्र विद्रोही

पारो का नाम सुनते ही शरतचंद्र के देवदास की याद आना स्वाभाविक है, लेकिन राजस्थान के मेवात में पारो शब्द का देवदास से कोई संबंध नहीं है। हरियाणा और राजस्थान के काफी बड़े भू-भाग में फैले मेवात में पारो एक ऐसी परंपरा के रूप में लगातार विकसित होती दास्तान है जो मजहब और जातीय संस्कृति की आड़ में औरतों की खरीद-फरोख्त से जुड़ी हुई सबसे गैर मानवीय दास्तान है।

मेवात के किसी भी गांव में चले जाइए, यहां आपको एक-दो से लेकर दर्जनों पारो मिल जाएगी। जिनकी मौजूदगी और औचित्य के बारे में पूछने पर गांववाले चुप्पी साधना ही बेहतर समझते हैं। ग्राम कडूकी के आमीन खान बताते हैं कि जिन लोगों का मेवात में निकाह नहीं होता, वही लोग बिहार, असम और हैदराबाद से औरतें लातें हैं। जाहिर है पारो नामक अवधारणा की शुरूआत तो कुंवारे रहने वाले लोगों की शादी के वैकल्पिक तरीके के रूप में हुई थी, लेकिन वास्तव में यह महिलाओं की तस्करी का एक सामाजिक अध्याय है।

पारो का मतलब होता है, ऐसी औरत जिसे देश के दूसरे हिस्सों से पैसे देकर खरीद कर लाया जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से इस नाम का संबंध यमुना नदी से था। मेवात की सीमाएं यमुना तक फैली थी, इसलिए यमुना पार से लाई गई औरतों को पारो कहा जाने लगा। शुरू में पारो का प्रचलन मेवात में अपवाद के रूप में था लेकिन धीरे-धीरे इसका प्रचलन बढ़ता गया और यह यहां के सामाजिक जीवन के लिए एक सामान्य बात हो गई है। एक अनुमान के मुताबिक अकेले अलवर जिले के तिजारा, किशनगढ़बास, रामगढ़, लक्ष्मणगढ़, उमरैण, कोटकासिम प्रखंड में लगभग 800 गांवों में पांच हजार महिलाएं पारो की तरह अपना जीवन जी रही हैं। इनमें से कितनी पारो पत्नी के रूप में रह रही है और कितनी बिना शादी के मां बनने पर मजबूर है यह कहना मुश्किल है लेकिन फिर भी इन दोनों में कुछ समानताएं हैं।

सभी पारो असम, बिहार, उड़ीसा, आंध्रप्रदेश या उत्तर पूर्व के राज्यों से खरीद कर लायी जाती है। इनको यहां लाने के बाद स्थानीय समाज में प्रचारित किया जाता है कि लड़की के घरवाले गरीब थे और उनके यहां खाने के लाले पड़े थे इसलिए उन पर दया करके करके उनकी जिंदगी बसाई जा रही है। यह अलग बात है कि खरीद कर लायी गयी लड़की को यह पता नहीं होता कि उसके मां-बाप ने उसे बेच दिया और वह हमेशा के लिए गुलाम बना दी गई है। यहां आने के बाद एक तरफ जहां ऐसी महिलाएं यौन इच्छा की पूर्ति का जरिया बन जाती हैं वहीं दूसरी तरफ उन्हें घोर अमानवीय यातनाएं भी सहनी पड़ती हैं। जो महिला यहां के नारकीय जीवन से छुटकारा पाने की छटपटाहट लिए घर की चहारदीवारी से निकलने की हिम्मत करती है उसे सजा के तौर पर इतनी यातना दी जाती है कि कि उसकी मौत ही हो जाए या फिर दलालों के हाथ बेचकर उसे वेश्यालय तक पहुंचा दिया जाता है।

पारो नामक इस नई विकसित होती परंपरा के पक्ष में एक महत्वपूर्ण तर्क यह दिया जाता है कि मेवात में ज्यादातर पुरूष शादी से वंचित रह जाते हैं और योग्य कन्या नहीं मिलने पर वे अपनी शादी के लिए बाहर से महिलाएं खरीद कर लाते हैं। इस तर्क के पीछे घटते स्त्री-पुरूष अनुपात का उदाहरण भी दिया जाता है। पूरे मेवात में दहेज का प्रचलन और दहेज के चलते लड़कियों को छोड़ने की परंपरा भी तेजी से बढ़ रही है। संभवतः उत्तर भारत में सबसे ज्यादा दहेज मेवात में लिया जाता है और पत्नी छोड़ने की सबसे ज्यादा घटनाएं

भी यही होती है। दूसरी तरफ घासोली, खानपुर, ककराली आदि गांवों में अनेक पारो उन पुरूषों के घर में पाई गई हैं, जिनके पहले से ही विवाहिता पत्नी है। यानि पारो के बारे में जो तर्क देकर, इस अवधारणा को सामाजिक दृष्टि से जायज और मानवीय सिद्ध किया जाता है, वह केवल औरतों की खरीद फरोख्त के व्यवसाय को जायज सिद्ध करने के मकसद से ही गढ़ा गया है।

चूंकि पारो को एक किस्म की सामाजिक मान्यता प्राप्त होती है इसलिए पुलिस और प्रशासन के सामने यह औरतों की खरीद फरोख्त के व्यवसाय या किसी तरह के अपराध के रूप में नहीं आता। दूसरी तरफ पारो का मायका चूंकि काफी दूर होता है और उसके पक्ष के लोग यहां नहीं रहते, इसलिए पारो अपनी दर्दनाक दास्तान के खिलाफ कोई शिकायत नहीं करती। इसलिए यह व्यवसाय शासन-प्रशासन की जानकारी के बावजूद बहुत तेजी से फल-फूल रहा है।

पिछले दिनों कोट-कासिम थाने ने जुलाई 2001 में मृत मिली अज्ञात महिला के मामले में जब जांच शुरू की तो उससे पारो के बिकने-खरीदने की दास्तान का खुलासा हुआ था। फिलहाल इस केस का अभियुक्त जेल में है। इसी तरह चाइल्ड-लाइन की पहल पर पकड़ी गई जौली दत्ता, जो फिलहाल मदर टेरेसा अनाथालय में रह रही है, के मामले में भी औरतों की खरीद-फरोख्त का मामला सिद्ध होता है, लेकिन शासन-प्रशासन इन घटनाओं को घटना विशेष मानकर शांत हो जाता है और बहुत व्यवस्थित तरीके से चल रहे इस व्यवसाय के बारे में टिप्पणी नहीं करता।

पारो के मामले में जहां एक तरफ मेवात में अय्याशी की प्रवृति दिखलाई दे रही है, वहीं दूसरी तरफ इस तरह के व्यवसाय में लिप्त लोग अब संगठित रूप से व्यवहार करते नजर आते हैं। शादी के नाम पर खरीदी गई लड़कियों को वेश्यावृति के धंधे में लगाने के लिए मेवात में दलालों का गिरोह बड़ी तादाद में सक्रिय रहता है। कई स्थानों पर इनके थानों से काफी गहरे रिश्ते हैं।

पारो की इस अवधारणा के अनेक पहलू बहुत दर्दनाक हैं जैसे पारो को किसी भी तरह का विधिक अधिकार प्राप्त नही होता। आम तौर पर इन्हें दूसरे दर्जे की औरत माना जाता है। ये चाहे किसी भी वक्त और कभी भी घर से निकाली जा सकती है। ये महिलाएं बेहत सस्ते मजदूर के रूप में सुबह से शाम तक खेतों में, घरों में और पशुओं के साथ खटती रहती है जिसके एवज में उन्हें दो वक्त का खाना और कपड़े मिल जाते हैं। आम तौर पर इन महिलाओं के पास कोई जेवर, कोई नगदी या संपत्ति नहीं होती। वे चाहे न चाहे हर साल मां बनने को मजबूर है।

मेवात के अलावा अलवर-भरतपुर क्षेत्र के कई गांवों में भी अनुसूचित जाति और पिछड़े वर्गों में भी यह परंपरा धीरे-धीरे विकसित होती जा रही है। गरीबी, बेबसी और सामाजिक विद्रुपताओं के चलते जानवरों की तरह जीवन जीने को मजबूर पारो को भले ही समाज के अपने तर्क देकर जायज ठहराए, लेकिन फिर भी समाज के सांस्कृतिक मापदंड ही बता देते है कि पारो की कब्र नहीं होती। पारो तो बिकने के लिए, वंश को आगे बढ़ाने के लिए और सस्ती मजदूरी के लिए ही बनी है। वह इंसान के तौर पर आज भी नहीं गिनी जाती। (चरखा)

एक दशक का पड़ाव

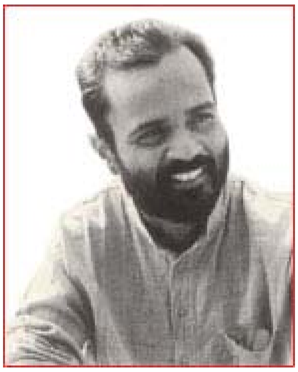

यह हमारे लिए निश्चित ही आत्मसंतुष्टि और गौरव की बात है कि तमाम आर्थिक, भौतिक बाधाओं, दिक्कतों के बावजूद हम इस साल चरखा की स्थापना का एक दशक पूरा कर रहे हैं। ठीक 10 साल पहले जब चरखा अस्तित्व में आया था, तब उसके सामने तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक हालात के मद्देनजर मीडिया में मुद्दों के लिए स्थान दिलाने की चुनौती थी। आज वह चुनौती और भी बड़ी हो गई है, क्योंकि बीते 10 सालों में मीडिया में तकनीकी रूप से तरक्की होने के बावजूद मुद्दों के प्रति संवेदनशीलता घटी है। जबकि इस दशक में जनमुद्दे और भी गंभीर और व्यापक होकर प्रभावशाली रूप में सामने आए हैं।

बीते दशक में हमने चरखा की आंतरिक आर्थिक दिक्कतों के बावजूद अपनी प्रतिबद्धता और गतिशीलता में कोई कमी नहीं आने दी। उल्टे हम परेशानियों को झेलकर मजबूत होते गए। हमारी गतिविधियों की संख्या और दायरा बढ़ता ही गया। चरखा के संस्थापक संजय घोष के अपहरण के बाद के 18 महीनों की निष्क्रियता का दौर छोड़ दें तो निश्चित तौर पर चरखा लगातार प्रगति के मार्ग पर ही अग्रसर रहा है। अकटूबर 1998, यानी चरखा के दोबारा सक्रिय होने के बाद के छह सालों में चरखा ने मीडिया के बदलावों को काफी नजदीकी और गंभीरता से देखा है, इस दौर में वह मुद्दों के साथ भी लगातार जुड़ा रहा है। यही वजह है कि तेजी से बढ़ते विज्ञापनों तथा घटती संवेदनशीलता के बावजूद वह मीडिया में मुद्दों की उपस्थिति दर्ज करा पाने में सफल रहा है। पिछले छह सालों में हिंदी के अखबारों में प्रकाशित 600 से भी ज्यादा इस बात का सबूत हैं। चरखा की फीचर सेवा जो फिलहाल देश के करीब 80 अखबारों में नियमित तौर पर विकासात्मक मुद्दों पर आलेख भेजती है, के लेखकों में राज्यों के जनमुद्दों पर सक्रिय सामाजिक कार्यकर्ताओं के अलावा नामी-गिरामी लोग भी शामिल रहे हैं। इनमें अरूंधति राय, संदीप पांडेय, राजेंद्र सिंह, ज्यां द्रेज, शबाना आजमी तथा जावेद अख्तर सरीखे लोगों के नाम लिए जा सकते हैं।

अगर हम चरखा को गतिविधियों के आईने में देखें तो पाते हैं कि 1994 से उत्तर-पूर्व के सातों राज्यों, राजस्थान, झारखंड व मध्यप्रदेश में मीडिया कार्यशालाएं आयोजित करने का सिलसिला लगातार जारी रहा है। उत्तर-पूर्व के साथ हमने दुबारा अपना रिश्ता कायम किया जब दो साल पहले मिजोरम को अपनी लेखन व कॉमिक्स कार्यशालाओं में प्रभावी तौर पर शामिल किया। हमने मिजोरम के मुद्दों को मुख्यधारा मीडिया में शामिल करने के लिए दिल्ली में मीडिया संवाद का आयोजन किया जिसमें वहां के पत्रकारों के साथ दिल्ली के वरिष्ठ पत्रकारों की सफल बातचीत आयोजित की। इसके अलावा उत्तरांचल भी पिछले साल से हमारी गतिविधियों के दायरे में आ चुका है। इस साल से हम बिहार में भी सक्रिय होने जा रहे हैं।

चरखा की गतिविधियों में एक नया आयाम पिछले साल दिसंबर से जुड़ा, जब हमने संजय घोष शांति व विकास फेलोशिप की शुरुआत की। पहली फेलोशिप कश्मीर के दो युवा पत्रकारों को अंग्रेजी व उर्दू में दी गई ताकि वे कश्मीर में चल रहे विकास व शांति को प्रयासों को कलमबद्ध कर सकें। इसके अलावा चरखा ने सामुदायिक रेडियो की जरूरत को भी शिद्दत से महसूस किया है। झारखंड में मंथन युवा संस्थान के साथ चरखा इसी साल से सामुदायिक रेडियो पर गतिविधियों की शुरूआत कर रहा है।

चरखा ने अपने एक दशक के सफर में कई उतार-चढ़ाव देखे हैं, लेकिन आज जब हम अपनी दसवीं वर्षगांठ मना रहे हैं, यही समय है जब हम अब तक के अपने सफर पर एक नजर डालें, उससे सीख लें और आगे के सफल सफर के लिए और बेहतर तरीके अपनाएं।

हमारी मदद कैसे करें?

- कार्यशालाओं में हिस्सा लेकर और विकास और हाशिए के मुद्दों पर लेख लिखकर।
- चरखा को लेखों का संपादन अनुवाद करके और मीडिया में जगह दिलाकर।
- आर्थिक सहायता देकर

चरखा स्टॉफ

शंकर घोष

अध्यक्ष व मुख्य कार्यकारी

संपादकीय विभाग

अमन नम्र, स्थानीय संपादक,

सुजाता राघवन, सहायक संपादक, अंग्रेजी

प्रतिभा ज्योति, सहायक संपादक, हिंदी

कार्यक्रम

सुनीता रॉय, कार्यक्रम प्रबंधक,

इंद्राणी डे, सह संपादक, अंग्रेजी

प्रबंधन

संजय मिश्रा, कार्यालय प्रबंधक,

एकाउंट

मंजू जेम्स, एकाउंटेंट,

चरखा सहयोगी

विजी बालाकृष्णन: पत्रकारिता से जुड़ाव, शांध एवं दस्तावेजीकरण में विशेष रुचि, चरखा के विभिन्न कार्यक्रमों में सलाहकार के रूप में विशेष सहयोग

अतनु रॉय: देश के जानेमाने रेखांकन कलाकार तथा दृश्य मीडिया के रचनात्मक सलाहकार।

आनिन्दियो रॉय: विकास के मुद्दों पर फिल्में बनाने से जुड़ाव, दृश्य-श्रव्य मीडिया के सलाहकार।

स्वराज चौहान: सामाजिक मुद्दों से विशेष जुड़ाव रखने वाले वरिष्ठ पत्रकार। हिंदुस्तान टाइम्स व स्टेट्समैन सरीखे अखबारों से लंबे समय तक जुड़े रहे। फिलहाल स्वतंत्र पत्रकारिता तथा चरखा के साथ जुड़ाव।